मैथिलीशरण गुप्त और उनकी कृति ‘द्वापर’

प्रो0 पवन अग्रवाल

हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

2020

प्रस्तावना एवं तथ्य

- ‘**द्वापर**’ श्रीकृष्ण कथा पर आधारित मैथिलीशरण गुप्त जी की महत्वपूर्ण कृति है। इसमें श्रीकृष्ण के चरित्रोद्घाटन द्वारा मानवता का आदर्श उपस्थित किया गया है ।
- ‘द्वापर’ का **प्रकाशन 1936 ई0** में हुआ ।
- ‘द्वापर’ में ‘मंगलाचरण’ के अतिरिक्त **16 खण्ड** हैं। इनमें से अन्तिम ‘सुदामा’ खण्ड बाद में जोड़ा गया। कवि ने चौथे संस्करण की भूमिका में स्वयं लिखा है– “‘द्वापर का आरम्भ ‘सुदामा’ को लेकर हुआ था, परन्तु पुस्तक में उसे इस कारण नहीं दिया गया था कि लिखते–लिखते उसे तीन खण्डों में समाप्त करने का विचार किया गया था। पहला खण्ड ‘गोपाल’, दूसरा ‘द्वारिकाधीश’ और तीसरा ‘योगीराज’, परन्तु अनेक कारणों से अब तक कुछ न हो सका। आगे भी कोई बड़ी आशा नहीं। अस्तु, इस बार पुस्तक के अन्त में वह आरम्भ का अंश भी जोड़ दिया गया है ।”
- वर्तमान ‘द्वापर’ कृति में उल्लिखित **15 पात्रों** का श्रीकृष्ण से सम्बन्ध है जो उन्हें सर्वस्व मानते हैं।

- ‘द्वापर’ अपने विशिष्ट–शैल्पिक विधान के कारण आकर्षण का केन्द्र रहा है। इसके सभी खण्ड **‘स्वकथन’** (SOLILOQUY) के रूप में लिखे गये हैं।
- ‘द्वापर’ में कवि ने विधृता, देवकी और यशोदा के माध्यम से नारी के विभिन्न रूपों और प्रश्नों को खड़ा किया है जो समकालीन परिस्थितियों में नारी के स्वाभिमान एवं अस्तित्व से जुड़े हुए हैं।
- वहीं कवि ने बलराम, नारद और सुदामा के माध्यम से व्यवस्था पर प्रश्न उठाये हैं और युगानुकूल परिवर्तन के लिए प्रेरित किया है।
- ‘द्वापर’ में कवि ने तत्कालीन युग पुरूष श्रीकृष्ण के बारे में संदेह, व्यामोह, उत्कट प्रेम, भक्ति, सखा भाव को सजीवता से उद्घाटित किया है।
- द्वापर में कवि ने **पुरातन कथा में नूतनता की अभिव्यक्ति** की है।

द्वापर का शिल्प

'द्वापर' के शिल्प को लेकर विद्वानों में मतभेद रहा है। कोई इसे 'मुक्तक काव्य' के रूप में देखता है तो कोई 'प्रबंध काव्य' के रूप में।

- **डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी** ने प्रबंध-श्रृंखला को देखकर 'द्वापर' को "**गीतकाव्यात्मक प्रबंध काव्य**" स्वीकार किया है।
- **डॉ० उमाकांत** ने नाटकीय तत्त्वों का प्राधान्य स्वीकार करके द्वापर को "**नाट्य प्रबंध**" का एक रूप माना है।
- **डॉ० कमलाकांत पाठक** इसमें आत्माभिव्यंजना की प्रधानता एवं रचना तंत्र की दृष्टि से 'द्वापर' को "**प्रगीतात्मक आत्म–संलाप**" काव्य कहते हैं।
- **डॉ० द्वारिका प्रसाद सक्सेना** ने उपर्युक्त मतों पर अपने निम्नलिखित विचार व्यक्त किये हैं–

1. “बन्ध एवं रचना विधान की दृष्टि से देखने पर तो यही ज्ञात होता है कि इस काव्य के सभी आत्मोद्‌गार सर्वथा स्वतंत्र है, उसमें कोई पूर्वा पर सम्बन्ध नहीं है और वे एक दूसरे से सम्बद्ध भी नहीं है। अतः यह मुक्तक काव्य है। परन्तु ध्यानपूर्वक देखा जाए तो सभी खण्ड स्वतंत्र होते हुए भी परस्पर सम्बद्ध हैं, उनमें विचार एवं भावों की एक श्रृंखला है और वे किसी एक महान चरित्र की ओर संकेत करते हुए जान पड़ते हैं। अतः इसे शुद्ध मुक्तक काव्य कहना भी असंगत प्रतीत होता है।”

2. .... साधारणतया आधुनिक युग तक तीन प्रकार के प्रबंध काव्य लिखे गये हैं।

प्रथम वे जिनमें महाकाव्य के समस्त शास्त्रीय लक्षण विद्यमान हैं, किन्तु दृष्टिकोण अथवा रूप-शिल्प सम्बन्धी कोई मौलिकता एवं नवीनता नहीं दिखाई देती। जैसे- वैदेही वनवास, हल्दीघाटी, जौहर आदि।

द्वितीय वे जिनमें शिल्प सम्बन्धी युगानुकूलता, नवीनता और दृष्टिकोण सम्बन्धी मौलिकता के रहते हुए भी महाकाव्य के शास्त्रीय लक्षणों का निर्वाह किसी न किसी सीमा तक किया गया है। **जैसे–** साकेत, कामायनी, नूरजहाँ आदि.......।

तृतीय वे जिनमें परम्परागत प्रबंध–रूढ़ियों का पूर्णतया परित्याग किया गया है और नवीनता एवं मौलिकता लाने के लिए प्रबंन्धात्मकता एवं भावात्मकता का बहिष्कार किया गया है। **जैसे**- टेनीसन के 'टैस्टामेंट ऑफ ब्यूटी' और 'आइडिल्स ऑफ दि किंग या हार्डी के 'दी डाइजैस्ट' ।

- **'द्वापर' काव्य की रचना भी तीसरी कोटि के प्रबंध काव्यों के समान ही हुई है।**

द्वारिका प्रसाद सक्सेना का निष्कर्ष– "........ अतः एक सम्पूर्ण इतिवृत्त के नाटकीय ढंग से प्रस्तुत होने के कारण 'द्वापर' काव्य को नाटकीय तत्त्वों से परिपूर्ण आत्म–संलाप–शैली में लिखित प्रगीतात्मक प्रबंध काव्य कहना अधिक उपयुक्त जान पड़ता है।

अभिव्यक्ति पक्ष

1. कर्म की अपेक्षा भक्ति की महत्ता का प्रतिपादन

'द्वापर' कवि ने **भक्ति में समर्पण** को महत्त्व दिया है। द्वापर का प्रत्येक पात्र अपने आराध्य श्रीकृष्ण के प्रति समर्पण भाव रखता है। उनसे किसी प्रतिदान की अपेक्षा नहीं है–

> "नहीं चाहती मैं विनिमय में,
> उन वचनों का वर्म हरे।
> तुझको एक तुझी को अर्पित,
> राधा के सब कर्म हरे।।" (राधा)

इसी प्रकार 'विधृता' भक्ति भाव में डूबकर **गोपी–भाव** की भक्ति को प्रश्रय देती है-

“श्याम–सलोने पर यदि सचमुच,
मेरा मन ललचाया।
तो फिर क्या होता है इससे,
कहीं रहे यह काया” ?।। (विधृता)

गोपियों से संवाद करके उद्धव स्वयं **सगुण के उपासक** हो जाते हैं-

“एक एक तुम सब राधा हो
कहाँ तुम्हारी राधा,
नहीं देखती मुझे यहाँ वह
हुई कौन सी बाधा ?
सच कहता हूँ, मैने अपना
राम तुम्हीं में पाया,
किन्तु तुम्हारा कृष्ण कहाँ, मैं
यही पूँछने आया”। (उद्धव)

2. उद्धव–गोपी संवाद में नवीन भाव बोध–

'द्वापर' में गोपियाँ 'उद्धव' को पारंपरिक काव्यों की भांति न तो उलाहना देती हैं और न मजाक उड़ाती हैं, अपितु, उनसे बुरा न मानने का आग्रह करती हैं–

"कृपया वचन न मन में रखना,
तुम अन्यान्य हमारे।
प्रिय के बन्धु, अतिथि हो उद्धव,
तुम सम्मान्य हमारे।"

इतना ही नहीं 'कुब्जा' के प्रति भी सद्भाव रखकर कृष्ण की देख–रेख का संदेश देती है–

"यौवन–सा शैशव था उसका,
यौवन का क्या कहना ?
कुब्जा से विनती कर देना,
उसे देखती रहना।"

लेकिन गोपियाँ आधुनिक नारी की भांति अपनी **अस्मिता के प्रति सजग** हैं और उनका स्वाभिमान कृष्ण के प्रति विद्रोहात्मक हो जाता है-

“मुरली तो बज चुकी बहुत अब,
शंख फूँकेंगें सीधे,
दूर मयूर, पलेंगें रण में,
गीध गुणों के गीधे।
राधा जब तक हैं अमानिनी
करें कृष्ण मनमानी :
उसमें अहम्भाव तो आवे,
भरें न आकर पानी।”

3. नारी स्वाभिमान एवं अस्मिता का प्रस्फुटन–

गुप्तजी ने मध्यकालीन, सामंती व्यवस्था में अपमान, दासता एवं पुरूष की पराधीनता को सहन करने वाली स्त्री के स्थान पर स्वत्वाधिकार, अस्मिता, स्वतंत्रता एवं विद्रोहधारिणी आधुनिक नारी के स्वर मुखर करके, नारी के स्वाभिमानी रूप को प्रस्तुत किया है।

श्रीमद्‌भागवत् के दशम् स्कन्ध में तेईसवें अध्याय में एक कथा है जिसमें श्रीकृष्ण अपने साथियों के साथ वन में दूर निकल जाते हैं। भूख लगने पर, निकट हो रहे यज्ञ के समीप ग्वाल-वालों को याज्ञिक ब्राह्मणें के पास भेजते हैं जहाँ उन्हें दुत्कार दिया जाता है। तब श्रीकृष्ण उन्हें स्त्रियों के पास भेजते हैं, जहां वह तृप्त होते हैं। किन्तु एक ब्राह्मण बलपूर्वक एक स्त्री को ऐसा नहीं करने देता और वह दुःख में शरीर छोड़ देती है। गुप्त जी ने इस स्त्री, जिसे उन्होनें 'विधृता' नाम दिया उससे नर-नारी के संबंधों को लेकर प्रश्न उपस्थित करते हैं।

(क). पुरूषों के स्त्रियों पर बलात् अधिकार पर प्रश्न–

"वह गुण किसने तोड़ा, जिसमें,
यह जोड़ा जकड़ा था ?
नर, झकझोर डालने को ही
क्या, यह कर पकड़ा था ?
कामुक–चाटुकारिता ही थी
क्या वह गिरा तुम्हारी ?
एक नहीं दो–दो मात्राएँ,
नर से भारी नारी।"

(ख). स्वत्त्वधिकार का प्रश्न–

"अधिकारों के दुरूपयोग का
कौन कहाँ अधिकारी ?
कुछ भी स्वत्त्व नहीं रखती क्या
अर्द्धांगिनी तुम्हारी ?

(ग). अस्मिता का प्रश्न–

क्या नारी केवल यौन कुण्ठाओं और वासना की पूर्ति मात्र है ? क्या उसमें अन्य भाव नहीं है ?

“हाय! वधू ने वर–विषयक,
एक वासना पाई ?
नहीं और कोई क्या उसका
पिता, पुत्र या भाई।
नर के बाँटे क्या नारी की
नग्न मूर्ति ही आई ?
माँ, बेटी या बहिन हाय! क्या
संग नहीं वह लाई ?

(घ). पुरूष प्रधान सत्ता के प्रति आक्रोश –

“अविश्वास, हा ! अविश्वास ही
नारी के प्रति नर का
नर के तो सौ दोष क्षमा हैं,
स्वामी है वह घर का।

× × ×

उपजा किन्तु अविश्वासी न
हाय ! तुम्हीं से नारी ।
जाया होकर जननी भी है
तू ही पाप-पिटारी ।”

(ड). पुरूषों की काम लोलुपता पर प्रश्न –

“व्रतियों की उन कुल स्त्रियों के

प्रति अश्लील रहो तुम,

फिर भी श्रोत्रिय-होत्री ठहरे,

क्यों न, सुशील रहो तुम।

(च). राजा के प्रति विद्रोह–

नारी केवल अस्मिता पर ही प्रश्न नहीं खड़ा करती बल्कि देवकी के मुख से गुप्त जी उस आतातायी पूरी राजसत्ता को प्रश्नों के घेरे में खड़ा कर देते हैं–

"राजा ! प्रभो, यही राजा है
तेरा प्रतिनिधि ? धिक् धिक् ।
क्या इस राजा और प्रजा का
वही एक विधि ? धिक् धिक् ।
धिक् तुमको, तेरे राजा को,
वह है स्वेच्छाचारी,
अविचारी, अन्यायी, बर्बर,
केवल पशुबल-धारी ।"

4. अर्वाचीन एवं नवीन पीढ़ी के मध्य सामंजस्य–

गुप्त जी ने बलराम के द्वारा नई पीढ़ी और पुरातन पीढ़ी के मध्य सामंजस्य स्थापित करने का प्रयत्न किया है । उनका मानना है कि समयानुकूल नई–नई विचारधाराओं का प्रस्फुटन होना चाहिए और यदि वह मानव के विकास में साधक है तो उन्हें नई पीढ़ी को अवश्य ग्रहण करना चाहिए।

"जावेंगे अवश्य हम अपने ही
प्रिय पितरों के पथ से,
किन्तु चक्र तो नहीं फंसेगें,
पूछेगें निज रथ से।
× × × ×
बन्धन–कर्त्तनार्थ पुरखों ने
हमको सार दिया है :
किन्तु साथ ही साथ उन्होनें
उसका भार दिया है ।"

“जितना उसे स्वच्छ रक्खोगे,
उतनी धार बढ़ेगी।
और नहीं तो धूल-धार ही
अपने हाथ लगेगी ।”

गुप्त जी का मानना है कि प्रत्येक पीढ़ी को अपने समयानुकूल, अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाने का प्रयत्न करना चाहिए-

“पीछे पितर पृष्ठ-पोषक हैं,
पर भविष्य तो आगे ।
यदि अपना परिणाम न देखें,
तो हम अन्ध-अभागे ।”

5. वर्तमान के प्रति प्रेम–

“अपने युग को हीन समझना
आत्महीनता होगी ।
सजग रहो, इससे दुर्बलता
और दीनता होगी ।
जिस युग में हम हुए, वही तो
अपने लिए बड़ा है,
अहा ! हमारे आगे कितना
कर्मक्षेत्र पड़ा है ।”

6. स्वावलंबन एवं स्वदेशी के प्रति प्रेरणा–

“हल ही आयुध रहे हली का,
काढ़े उसके काँटे ;
हरी–भरी उर्वरा रहे वह
तृण–तृण के भी बाँटे ।
अपने ब्रज की रज में ही तुम
सब विभूतियाँ पाओ ;
दूध पियो अपनी गायों का,
वीर बली बन जागो ।”

7. राष्ट्र के प्रति प्रेम एवं बलिदान की प्रेरणा–

"एक–एक, सौ सौ अन्यायी

कंसों को ललकारो ;

अपनी पुण्य भूमि के ऊपर

धन–जीवन सब वारो ।" (बलराम)

४.   हिंसा एवं पशुबलि का विरोध–

“जिसमें पशु–वध करते करते
सूखा हृदय तुम्हारा,
वे मर मिटें, और हे ईश्वर,
इन्हीं बालकों द्वारा ।”   (विधृता)

×   ×   ×   ×

यज्ञ वेदियाँ हैं वे अथवा
कौटिक–कुटियाँ सारी ?
व्यंजन नहीं, देव देखेंगे
श्रद्धा–भक्ति तुम्हारी ।
कम क्या घृत ; दधि–दुग्ध, शर्करा,
देव–अन्न ओदन ही,
श्रुति न विरोध करे तो समझो,
उसका अनुमोदन ही ”।   (बलराम)

9. न्याय के लिए संघर्ष की प्रेरणा–

"न्याय-धर्म के लिए लड़ो तुम
ऋत-हित समझो बूझो
अनय राज, निर्दय समाज से
निर्भय होकर जूझो ।" (सुदामा)

10. भौतिकता के प्रति उदासीनता–

“पगली, कभी मुखापेक्षी है

सच्चा सुख यदि धन का,

तो इससे अपमान बड़ा क्या,

होगा जन जीवन का ?” (बलराम)

निष्कर्ष–

‘द्वापर’ गुप्त जी की जहाँ शैली–विशेष की दृष्टि से प्रभावित करने वाली रचना है, वहीं युगानुकूल प्राचीन एवं अर्वाचीन मूल्यों, भावनाओं विचारों के प्रति एक सजग प्रहरी की भांति उद्देश्यपूर्ण । इसकी प्राचीन कथा में नये युग के उद्घोष ध्वनित हुए हैं।

धन्यवाद